भाषा और प्रान्त

रजि० नं० बी ४४४८

# हरिजनसेवक

दो आना

(स्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १५ सम्पादक : किशोरलाल मशरूवाला सह-सम्पादक : मगनभाओी देसाओी अंक १९

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद-९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० ७ जुलाओी, १९५१

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

## शिवरामपल्लीमें विनोबा – ३

### आर्थिक समताके पथ्य

### श्री जवाहरलालजीका संदेश

"सर्वोदय सम्मेलनको मैं अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूं। आजकल सारी दुनियामें कुछ अंधेरा-सा छाया हुआ है। हमारे देशमें भी पुरानी रोशनी बहुत धीमी हो गयी है और अकसर अंधेरा मालूम होता है। चारों तरफसे बड़े बड़े प्रश्नोंने हमें घेर लिया है। ऐसे समय पर हम सबोंका कर्तव्य है कि रोशनीकी तलाश करें। अिसमें सर्वोदय बहुत सहायता दे सकता है और अुसकी तरफ हमारी निगाहें जाती हैं।"

### पंडितजीकी शुभकामना

अिस सम्मेलनके लिअे पं० जवाहरलाल नेहरूने अपनी शुभकामनाएँ अेक छोटेसे संदेशमें भेजी हैं। वह आप लोगोंने सुन लिया है। अुनका संदेश है तो बिलकुल छोटा, लेकिन चंद शब्दोंमें लिखनेवालेका सारा दिल प्रकट हो गया है। बहुत विनयसंपन्न और नम्रतायुक्त वह संदेश है। पुरानी रोशनी कहनेसे किस चीजकी तरफ अुनका अिशारा है, यह हम लोग समझ सकते हैं। फिर वे लिखते हैं कि अिस हालतमें सर्वोदयकी तरफ, यानी हमारे अिस समाजकी तरफ नजर जाती है।

### हमारी जिम्मेदारी

अुनका जो थोड़ासा परिचय मुझे हुआ है, अुस परसे मैं यह समझता हूं कि बापूकी बतायी हुअी राह पर ठीकसे चलनेकी कोशिश किस तरह हो सकती है, अिसी चिंतामें वे रहते हैं। बापूके बहुत सारे व्यावहारिक विचार न अुन्होंने पहले कभी मान्य किये थे, न शायद आज भी वे मान्य कर सकते हैं। लेकिन मुझे लगा कि बापूकी शिक्षाका जो सार है — सब जमातें प्रेमसे रहें, कहीं वैरभाव न हो, देशोंके बीचमें निरंतर सहकार रहे, अुच्च-नीचका भेद कहीं न हो, द्वेषभाव न हो, — वही मुख्य वस्तु आंखोंके सामने रखकर चलनेकी वे निरंतर कोशिश करते हैं। और कुछ अकेलापन भी महसूस करते होंगे। हम लोगोंकी तरफसे जो आशा अुन्होंने प्रकट की है, वह अिस दृष्टिसे है कि हम लोग बापूका प्रत्यक्ष कार्यक्रम लिये हुअे हैं। अतः और कहीं रोशनी न होगी तो हमारे पास जरूर कुछ न कुछ होनी चाहिये; हम अुसकी तलाशमें रहते होंगे, अिसलिअे कुछ न कुछ रोशनी हमें अवश्य मिलती होगी। अिस तरहकी आशा अुन्होंने प्रगट की है। जहां तक सब विश्वमें शांति और निर्वैर भाव रखनेका विचार है, वहां तक अुनके साथ हम सब लोग हैं, अितना मेरा विश्वास है। यह संदेश हमको अधिक सावधान रहनेके लिअे सूचित करता है और हमें दिशा भी बताता है। दिशा बतानेका अहंकार अुस संदेशमें नहीं है। फिर भी दिशा बताअी है। दिशा यह बताअी है कि हमको रोशनीकी तलाश करनी चाहिये, हमें सत्यकी शोधमें लगना चाहिये। अुस दृष्टिसे दो-तीन दिन तक यहां जो चर्चाएँ चलीं, वे अच्छी रहीं। सबके मनोभाव काफी संयमपूर्वक प्रकट हुअे और कुछ न कुछ प्रकाश हम लोगोंको जरूर मिला।

### अेक अप्रशस्त घटना

आज अेक छोटी-सी घटना हुअी, जो न होती तो बेहतर था। अुसका किंचित् जिक्र करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। हममें से अेक भाअी कुछ कहते थे। अुनको अपना व्याख्यान रोकना पड़ा। यह मुझे ठीक नहीं लगा। हम लोग जो कुछ यहां बोलते हैं, अुसमें अवश्य कोअी नयी चीज सबको मिलती है, अैसी बात नहीं है। मैं बोलता हूं और आप शांतिसे सुनते हैं, यह आपका मुझ पर बहुत अुपकार है। लेकिन मेरे मनमें मैं जानता हूं कि मेरे कथनमें शायद सौ शब्दोंमें से अेकाध शब्द ही कहीं अैसा होगा, जो कुछ नयी चीज बताता होगा। लेकिन अुस अेक शब्दके लिअे बाकीके ९९ शब्द आप सहन कर लेते हैं। कुछ लोगोंको तो यह भी अनुभव होता होगा कि मेरे कथनमें कोअी नयी चीज थी ही नहीं, अेक भी नया शब्द नहीं था। फिर भी वे मनमें सोचते होंगे कि अिसमें नयी चीज कुछ नहीं थी, लेकिन कहनेका ढंग नया था। अुसका भी असर होता है, यों सोचा होगा। कुछ लोगोंको तो यह भी लगा होगा कि अिसके कथनमें न कोअी नयी चीज थी और न कोअी नया ढंग था। फिर भी अुन्होंने अुसको सहन कर लिया। अुन्होंने क्या सोचा होगा? अुन्होंने अपने मनमें यह सोचा होगा कि यद्यपि अिसके कथनमें कोअी नयी चीज नहीं थी, ढंग भी नया नहीं था, फिर भी हमारे अपने निजके विचारकी अिसके कथनमें पुष्टि हुअी है, हमारे अपने विचारोंमें कुछ दृढ़ता अिससे हो जाती है, यों समझ कर अुन्होंने संतोष मान लिया होगा। अिस तरह महापुरुषोंके मुखसे जब विचार निकलते हैं, तो हम प्रेमसे सुनते हैं। अुसी तरह यहां अेकत्र हुअे हैं, तो परस्परका प्रेम बढ़ाते हैं। किसी जगह अेकाध चीज मिल गयी तो अुतनी अुठा ली, नहीं मिली तो श्रवण-कीर्तनका समाधान हुआ, अैसा मान लेते हैं। कभी-कभी यह जरूर हो सकता है कि किसीके कथनमें हमें कुछ विषयांतर भी प्रतीत हो, तो भी जिस तरह आज हुआ वैसा होना अुचित नहीं। क्योंकि अेक तो हम अध्यक्ष चुन लेते हैं, जो नियमन कर सकता है। जितना करनेकी जरूरत है, वह कर लिया करते हैं। अगर वह नहीं करता है और सुन लेता है, तो हमको भी समझना चाहिये कि हमें भी सुन लेना है। तो अिस तरह जहां हमने अध्यक्ष चुना, हम निर्भय हो जाते हैं। वैसे ही अेक दूसरी शक्ति भी हमारे पास है। अुसका भी हम अैसे मौकों पर अुपयोग कर सकते हैं, जब कि हमें किसीकी बात सुनने जैसी न लगे। वह शक्ति है यह

www.vinoba.in

छोटी-सी तकली। अपनी तकली अगर हम चलाते रहें, तो समय जाया गया अैसा नहीं लगेगा। वह तकली कोअी अच्छा व्याख्यान सुनते समय भी चला सकते हैं। लेकिन जिस व्याख्यानमें हमको विशेष दिलचस्पी नहीं लगती हो, अुसके दरमियान तकली हमको बहुत ही अाधार दे सकती है। तो हमारे समाजमें अिस तरहकी घटना नहीं होनी चाहिये। मैं आशा करता हूं कि आगे कभी हमारे संमेलनमें अैसी कोअी चीज नहीं होगी।

### दया-विकासका क्रम

अब आज अेक भाअीने मांग की कि आर्थिक समताके विषयमें कुछ विचार मैं प्रकट करूं। दो-चार मिनिटमें मेरे विचार में रख देता हूं। यह विषय बहुत विशाल है और अिसमें कह भी बहुत सकते हैं, सुन भी सकते हैं, करनेका तो बहुत ही है। लेकिन अेक बात विशेष ध्यानमें रखनेकी है। और वही आज मैं समझाना चाहता हूं। वह यह है कि मानवका अितिहास, जो प्रत्यक्ष ज्ञात है, यद्यपि चार-पांच, आठ-दस हजार सालका ही है, तो भी मानव-जीवनको अिस पृथ्वी पर शुरू हुअे कोअी दस लाखसे ज्यादा साल हो चुके हैं। तो अुतने वर्षोंमें निरंतर विकास होता गया है और अेक-अेक युगमें अेक-अेक गुण मनुष्य विकसित करता गया है। जैसे अेक व्यक्तिके गुणोंका अाहिस्ता-आहिस्ता विकास होता है, वैसे ही समाजके गुणोंका होता है। और अेक-अेक गुण-विकासकी पूर्णता, सीमित पूर्णता जहां होती है, या जहां अुसका अनुभव आता है, वहां दूसरे गुणकी प्यास लगती है और अुस गुणके विकासका क्रम शुरू होता है। तो मैं निरीक्षणसे अैसे निर्णय पर आया हूं कि तीन-चार हजार सालोंका अितिहास जो हम जानते हैं, अुसमें मानवने सर्वत्र जितने भी काम किये — सामाजिक, राजकीय, विद्या-विषयक, कुटुंब-विकासके और दूसरे तरह-तरहके — अुन सब कामोंमें दयाका विकासके करनेकी जरूरत रही। हमारे जो अुत्तम कार्यकर्ता हुअे, वे परम दयालु थे। बुद्ध भगवान जैसे हमारे जो महात्मा संतपुरुष हुअे, वे दयाकी मूर्ति थे। हमारे संतोंने, जो अुपदेशक हो गये, धर्मका मूल क्या है, यह समझाया। तो दयाका ही विकास हम करते गये। जो अनेक साम्राज्य हुअे, वे भी दयाके विकासके क्रमको अनिवार्य समझकर स्थापित किये गये थे। यह तो मैं गुण-विकासकी दृष्टिसे देखता हूं। जहां अेक नाटक चलता है, वहां गुण-दुर्गुण दोनोंके खेलमें से मुख्य सद्गुण ही विकसित होता रहता है। तीन-चार हजार सालोंमें जो साम्राज्य हुअे, अुनमें से कुछ बुरे थे, कुछ दयालु थे। लेकिन दयालु होना अच्छा है और निर्दय होना बुरा है, यह धर्म और अधर्मकी, पाप और पुण्यकी, व्याख्या सामने रखकर सारा समाज विकसित हुआ।

### आज समताके विकासकी जरूरत

होते-होते अब हम अैसे विचार पर आये हैं कि अिसके आगे हमें समताका विकास करना होगा। यह विकास कुछ दो-अेक हजार सालसे शुरू हुआ है। मतलब अुसका यह नहीं है कि समता शब्द नया है या कहें कल्पना नयी है। जैसे मैं कह चुका, वस्तुस्थिति यह है कि मानव दस लाख सालसे विकसित होता आया है। अिसलिअे हमारे ज्ञानमें, यानी अितिहासकी अवधिमें, हमारे अूंचेसे अूंचे जो संतपुरुष हुअे, अुन्होंने खास कोअी नया शब्द हमको नहीं दिया।

### कोअी भी सनातन तत्त्व नया नहीं होता

अेक दफा चर्चा चल रही थी। प्यारेलालजी मुझे मुहंमद पैगंबरकी कहानी सुना रहे थे। अुन्होंने कहा कि अरब कितने नीच, हीन, धर्महीन, आचारहीन और पशुवत् थे और अुनको मानव बनाया पैगंबरने। ठीक अुसी तरह गांधीजीने पशुप्राय भारतवर्षको मानव बनाया। अिस तरहका वे जिक्र करते थे — पैगंबरकी अुपमा देकर। तो मैंने अुनसे कहा कि न मैं आपकी अुपमा मानता हूं, न मैं आपका अुपमेय मानता हूं। न भारतवर्ष पशुवत् था, न अरबस्तान पशुवत् था। दोनों मानव थे। दोनों धर्मको जानते थे। लेकिन आचरणमें ढीले पड़ गये थे। पैगंबरने अरबस्तानको जगाया और अच्छे आचरणके लिअे प्रवृत्त किया; और गांधीजीने हिन्दुस्तानको जगाया और अच्छे आचरणके लिअे प्रवृत्त किया। लेकिन गांधीजीने हमको पशुसे मनुष्य नहीं बनाया है। पैगंबरने अरब लोगोंको पशुसे मनुष्य नहीं बनाया है। और न कोअी नया शब्द ही अुन्होंने हमें दिया है। 'दया' भी पुराना शब्द, 'सत्य' भी पुराना शब्द। ये सारे शब्द अरबी भाषामें मौजूद थे। 'अल्ला' शब्द भी नया नहीं है। वह पुराना है। गांधीजीने भी अेक भी नया शब्द नहीं बनाया। 'सत्याग्रह' शब्द नया है, अैसा आपको लगेगा। लेकिन 'सत्य' भी पुराना है और 'आग्रह' भी पुराना। कोअी शब्द नया नहीं है। अगर हम सारे पशु होते, तो अुनको असंख्य शब्द नये बनाने पड़ते। मतलब अुसका यह है कि गांधीजीने जो पुराना अनुभव और संस्कृति लाखों वर्षोंके अनुभवसे बनी थी, अुसीका कुछ आचरण किया और हम लोगोंको जागृत किया।

### समताके विकासकी व्यावहारिक आवश्यकता

कहनेका मतलब यह कि समताका विचार हमको सूझा है, तो भी वह विचार बहुत पुराने कालसे चला आया है। वह कल्पना नयी नहीं है। लेकिन अुसको अुस जमानेमें आदर्श मानते थे। और व्यावहारिक दृष्टिसे जिस गुणका विकास जरूरी मानते थे, वह दया थी। अिसलिअे दयाको धर्म समझते थे और समत्वको ब्रह्म समझते थे। वे यों कहते थे कि ब्रह्म समत्व है अर्थात् प्राप्तव्य वस्तु है और कर्तव्य वस्तु दया है, या यों कहिये कि दया धर्म है। अब हमको व्यवहारमें भी आचरणके लिअे समत्व गुणके विकासकी आवश्यकता महसूस होती है। लेकिन जैसे दयाका विकास हजारों साल तक हुआ, अुसके कारण अनेक साम्राज्य आये और गये, अनेक क्रांतियां हुअीं, समाजमें असंख्य परिवर्तन हुअे, अनेक संस्थाअें बनीं और नष्ट हुअीं, वैसे समताके गुणका विकास भी हजारों साल लेनेवाला है। यह हमको भूलना नहीं चाहिये।

### दया और समतामें अविरोध

अब साथ ही अेक और वस्तु ध्यानमें रखनी चाहिये, जिसे हम भूल जाते हैं। हम अकसर क्या करते हैं कि पुराने कवि, धर्म या पुरुष जब दयाका गान करते हैं, तो हम कहते हैं कि अिस गुणका हमको आकर्षण नहीं है। हमें समताका आकर्षण होता है। दया हम करना नहीं चाहते। अुसमें कुछ अहंकार भी आता है। दयाका निषेध करके अगर हम समताकी स्थापना करना चाहते हैं, तो हम अेक बड़ी भारी ताकतको खोते हैं और अेक नाहकका विरोध अपने सामने खड़ा करते हैं। हमें समझना चाहिये कि समताका विरोध विषमतासे हो सकता है, दयासे नहीं। तो सोचनेका अैसा ढंग हमें सूझना चाहिये, जिससे दयाका विकास करनेवालोंका सारा पुण्यबल, अुनकी सारी तपस्या समताके विकासके अुद्योगमें हमें मिल जाय। सोचनेका वह ढंग यह होगा: हम यों कहें कि दयाका विकास करते-करते आखिर अनुभवसे हम अिस नतीजे पर आये हैं कि समता निर्माण करना ही सच्ची दया है। विषमता रखते हुअे हमारे लिअे कुछ न कुछ दया जरूरी होती है, वह अच्छा गुण है, अुससे आत्माका कुछ समाधान होता ही है। फिर भी पूरा समाधान नहीं होता और सच्ची दया अुतनेसे नहीं होती है। सच्ची दया तब होती है, जब हम समता स्थापित करते हैं। अिसलिअे दयाका विकास करनेके कारण ही और अुस अनुभवसे ही हमें यह सूझा है कि अब हमें समता स्थापित करनी चाहिये। अिस तरह अगर सोचेंगे, तो पूर्वजोंकी सारी तपस्या हमको मिल जायेगी और अुस आधार

www.vinoba.in

पर हम अेक नयी तपस्या खड़ी कर सकेंगे। तो हमें यह भूल नहीं करनी चाहिये कि हम पुरानी दया-विकासकी परंपराका खंडन करें और हमारा अेक नया विचार स्थापित करना चाहें।

### हमारा अगला कदम

वैसे ही यह सोचनेका दोष भी हमें नहीं करना चाहिये कि पुराने लोगोंने दयाके विकासमें हजारों साल बिताये, तो हम समताको दस-पांच सालमें ही स्थापित कर देंगे। ये दोनों भूलें हम न करें और समझें कि व्यावहारिक विकासके लिअे अेक नया गुण हमने अुठा लिया। अेक ध्येयके तौर पर अिसको प्राचीनोंने माना था — अेक दूरके ध्येयके तौर पर, व्यक्तिगत ध्येयके तौर पर। कोअी व्यक्ति पूर्ण समताको प्राप्त कर सकता है, ब्रह्मनिर्वाण पा सकता है, यह भी अुन्होंने माना था। और समाजके खयालसे, यह भी माना था कि समता होगी, लेकिन बहुत दूरके कालमें होगी। तो यह जो अुन्होंने माना था अुससे हम आगे जा रहे हैं, जाना चाहते हैं और प्रत्यक्ष व्यवहारके रूपमें भी समताको सिद्ध करना चाहते हैं।

### नये कदममें सावधानीकी आवश्यकता

तो अपने अुन पूर्वजोंका बल लेकर हम आगे बढ़ना चाहते हैं, जिन्होंने धीरजसे अुसका विचार किया। वैसे हमें अब अिस गुणका विचार करना चाहिये। मान लीजिये कि विकासक्रममें अेक नया प्रकरण शुरू हुआ है। तो नया प्रकरण जिस सावधानीसे लिखा जाता है, अुस सावधानीसे अिस गुणका हमें विकास करना है। कहीं यह न हो कि जैसे दया मिथ्या होती है और अेक ओर अहंभाव पैदा करती है और दूसरी ओर दीनता पैदा करती है, वैसे समता भी मिथ्या बने और अुसके कारण हम विवेकको खो बैठें। समता अगर विवेकको मिटायेगी, तो वह टिक नहीं सकेगी। वह भी मिथ्या साबित होगी। और संभव है समताका विचार करते-करते अगर अुसमें विवेकहीनताका भी दोष रह गया, तो आगे अिस गुणको छोड़कर विवेक नामके गुणका विकास करनेका लोगोंको सूझे और अेक नया विकासक्रम हजारों सालके लिअे शुरू हो जाय।

तो समताका विवेकयुक्त और पूर्ण दयाके रूपमें हमें विकास करना है, यों समझकर अपने चित्तका हमें संशोधन करना चाहिये; अुसमें कहां विषमता छिपी है, कहां अूंच-नीच भाव छिपा है, यह ढूंढ़ना चाहिये। और अिस तरह जब हम नम्रताके साथ सोचेंगे, तो हमारे निजके जीवनमें, मेरे जैसेके जीवनमें — जो कि किसी संपत्तिका मालिक नहीं है और अिसलिअे शायद यह माना जायगा कि समताके, आर्थिक समताके बारेमें जिसको करनेका कुछ बाकी नहीं है — भी करनेका बहुत बाकी है अैसा पाया जायगा। और कअी तरहकी विषमताओंसे, जो शरीरके कारण पैदा हुअी हैं, मुक्त होनेकी अत्यंत आवश्यकता होगी।

### समताके प्रचारकी खुशी

जब हम समताका अेक भाग, समताकी अेक मात्रा, समाजमें चाहते हैं, तो सौगुनी समताकी मात्रा हममें होनी चाहिये। अुसके बिना हमारी चाह सफल होनेवाली नहीं है। हमारे शरीरोंमें ९८ डिग्री अुष्णता रहती है, क्योंकि सूर्यनारायण अनंत डिग्री अुष्णता रखता है। लेकिन कल सूर्यनारायण ही ९८ डिग्री रखने लगे, तो हम लोगोंकी देहोंमें कितनी अुष्णता रहेगी, अिसका आप गणित कर सकते हैं। तो समाजमें समताका जितना नाप हम चाहते हैं, अुससे शतगुना नाप हमारे जीवनमें होना चाहिये। तभी हमारे विचारों, कृतियों, आशाओं और संकल्पोंके द्वारा हम समाजमें समताकी स्थापना कर सकते हैं। अिस तरह सोचेंगे तो फिर हमारे बंग साहबको आश्चर्य नहीं होगा कि किशोरलालभाअी जैसे लोग क्यों दो हजार रुपये तनखाहको सहने करनेको तैयार होते हैं और क्यों कहते हैं कि व्यक्तिगत मालिकी फिलहाल दस लाखकी हम सहन कर लें। आखिर शब्दोंमें जब चीज रखी जाती है, तो कुछ मतभेदके लिअे, विचारभेदके लिअे अवकाश रहता ही है। किशोरलालभाअीका कोअी अाग्रह नहीं है। दस लाखके बदलेमें आप अगर दस हजार भी कर दें और वह चीज दो-चार सालमें स्थापित करनेकी अुम्मीद रखें और करें, तो अुससे अुनके दिलको कोअी तकलीफ नहीं होनेवाली है। अुनको यह लगनेवाली नहीं है कि अिन दोस्तोंने मेरा शब्द मिटाया। अुनको यही लगेगा कि बहुत अच्छा हुआ, मैंने दस-दस लाखका अंदाज किया था। लेकिन हालत अितनी बिगड़ी हुअी नहीं थी, काफी सुधरी हुअी थी; हमारे लोगोंमें पुरुषार्थ भी बहुत ज्यादा था, जितनेकी मेरी अपेक्षा नहीं थी और दस हजारका आखिरी नाप पांच सालके अन्दर अिन लोगोंने स्थापित किया। तो वे हमको धन्यवाद ही देनेवाले हैं। लेकिन अभी जो विषमताकी बातें मान्य की जाती हैं, वे क्यों मान्य की जाती हैं, यह तब ध्यानमें आयेगा जब अिस बातको हम समझेंगे कि गुण-विकासमें युग-युग बीत गये हैं। अिसलिअे हमें समाज-परिवर्तनके कार्यको विवेकसे, धीरजसे और सावधानीसे करना चाहिये।*

## हिन्दीकी परीक्षाअें

गूजरात विद्यापीठ राष्ट्रभाषा हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी परीक्षाअें सात-आठ सालसे ले रहा है। विधान-सभाके हिन्दीको राजभाषा स्वीकार करनेसे पहले अिन परीक्षाओंका अुद्देश्य गुजरात और सौराष्ट्रमें हिन्दीका प्रचार करना था। मगर अिसके राजभाषा हो जानेके बादसे अिन परीक्षाओंका अुद्देश्य सिर्फ प्रचारका ही नहीं, लोगोंको हिन्दी सिखानेका भी हो गया है।

पिछली ७, ८ अप्रैलको परीक्षाओंका परिणाम निकल चुका है। पहलीमें ६२.३ प्रतिशत, दूसरीमें ६६.४ प्रतिशत, तीसरीमें ४८.७ प्रतिशत और विनोतमें ३१.७ प्रतिशत विद्यार्थी पास हुअे हैं। परिणाम और परीक्षकोंके निवेदनोंको देखनेसे पता चलता है कि परीक्षार्थी अिन परीक्षाओंको प्रचार-परीक्षाअें ही समझते हैं, कम तैयारी करके परीक्षाओंमें बैठ जाते हैं और समझते हैं कि अुत्तेजन देनेके लिअे अिन परीक्षाओंमें तो हरअेकको पास कर ही देना चाहिये।

यह खयाल सही नहीं है। अब हमारी राजभाषा निश्चित हो गअी है। अब हिन्दीके लिअे लोगोंमें प्रचारकी आवश्यकता नहीं रही। प्रचारका जमाना बीत चुका। अब तो हरअेक देशवासीका कर्तव्य हो गया है कि वह जल्दीसे जल्दी हिन्दी लिखना, पढ़ना और बोलना सीख ले। जनताको हिन्दी सिखाना अब सरकारका काम हो गया है, और स्कूलोंमें लाजिमी तौर पर अिसकी पढ़ाअी शुरू होगी। मगर जब तक सरकारी तंत्र राजभाषाको अुचित रीतिसे सिखानेका पूरा प्रबन्ध न कर ले, तब तक हिन्दी प्रचारकी पुरानी संस्थाओंको हिन्दी सिखानेके कार्यमें सरकारका हाथ बंटाना चाहिये। हम अैसा करेंगे, तब ही १५ वर्षोंमें हिन्दी अंग्रेजीकी जगह ले सकेगी, वरना नहीं।

मैं हरअेक देशप्रेमीसे अपील करता हूं कि अगर वह हिन्दी नहीं जानता हो तो सीखे और फिर दूसरोंको सिखाये; और हिन्दी-प्रचारक अब प्रचारकी दृष्टिको छोड़कर हिन्दी सिखानेके कामको अपनायें। अगर हम सब अैसा करेंगे, तो यह राष्ट्रकी बड़ी भारी सेवा होगी।

गूजरात विद्यापीठ,
अहमदाबाद, २९-६-'५१

गिरिराज किशोर
मंत्री, परीक्षा-समिति

* सर्वोदय सम्मेलन, शिवरामपल्लीमें तीसरे दिन ता० १०-४-'५१ को दिये हुअे श्री विनोबाके भाषणका सार।

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

७ जुलाओ १९५१

## भाषा और प्रान्त

टेकचन्द-समितिके अिस निर्णयके विरुद्ध कि चुनावके लिअे डांग प्रदेश नासिक जिलेके साथ जोड़ा जाय, गुजरातमें अभी भी कुछ आन्दोलन चल रहा है। खुशीकी बात है कि गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके प्रमुख श्री कन्हैयालाल देसाओने यह निर्णय, यद्यपि वह अुनको आशाके खिलाफ था, अेक खिलाड़ीकी अुदारतासे स्वीकार कर लिया। राष्ट्रके हितकी दृष्टिसे राजनीतिके क्षेत्रमें अपयश मिलने पर प्रसन्न वृत्ति निभानेकी हमारे यहां बड़ी जरूरत है, और श्री देसाओ अिसके लिअे हमारे अभिनन्दनके पात्र हैं। अुन्होंने कहा:

> "अिस निर्णयसे गुजरातको आश्चर्य और खेद होगा। लेकिन हमने अुसके अनुसार चलना तय किया था; और मैं अुसे स्वीकारता हूं। अगर हम लोकतंत्रकी रीतिके अनुसार चलनेको अिच्छा रखते हैं, तो अपने झगड़े मिटानेका यही अेक तरीका हो सकता है।"

समितिने अपने निर्णयमें जाहिर किया है:

> "हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हमारे अिस निर्णयका सम्बन्ध सिर्फ आगामी चुनावोंके लिअे चुनाव-क्षेत्रोंकी रचनासे है। अुसका अिस बड़े सवालसे कोअी सम्बन्ध नहीं है कि बम्बअी राज्यका भाषावार बटवारा होने पर डांग गुजरातमें रहे या महाराष्ट्रमें। जिन सीमित सवालोंका निर्णय करनेके लिअे हमसे कहा गया है, अुनमें यह विषय कहीं नहीं आता। अिसका विचार तो, जब कभी हो तब, स्वतंत्र रूपसे ही करना होगा। हमारे अिस निर्णयका अिस सवाल पर कोअी अनुकूल-प्रतिकूल असर नहीं माना जाना चाहिये।"

'डांग गुजरातका' के हिमायतियोंके पक्षमें यह स्पष्टीकरण काफी है।

डांग प्रदेशके लिअे गुजरात और महाराष्ट्रके प्रतियोगी दावों पर किसी अेक प्रान्त या भाषाके प्रति आग्रह रखकर विचार करना मुझे अशक्य मालूम होता है। किसी खास भाषा या प्रान्तके प्रेमी अैसे अवसरों पर जिन भावनाओं और रागोंका अनुभव करते हैं, अुनसे मैं वंचित-सा हूं। लेकिन श्री कन्हैयालाल देसाओके अेक वक्तव्यमें नीचे लिखा मजमून पढ़कर मुझे खुशी होती है:

> "मेरा मत है कि बम्बअी अेक बहुभाषी प्रान्त है, जिसमें तीन मुख्य भाषाअें बोली जाती हैं। अैसे प्रान्तमें कुछ क्षेत्र अैसे होने अनिवार्य हैं, जिनमें अेकसे ज्यादा भाषाअें बोली जाती हों। अैसे जिलोंमें चुनाव-क्षेत्रकी सीमाओंके निर्णयका आधार भाषा नहीं हो सकती। व्यवस्थाकी सुविधा और वहांकी जनताके सम्बन्ध पर ही अुसका निर्णय किया जा सकता है।"

अिस अन्तिम वाक्यमें 'व्यवस्थाकी सुविधा और जनताके संबंध' के साथ 'तथा अुस क्षेत्रमें बसनेवाली आम जनताका अुत्तम हित' ये शब्द जोड़कर मैं अिन्हीं बुनियादों पर अुसे किस प्रान्तके साथ शरीक किया जाय, अिसका निर्णय करना अुचित समझता हूं।

कराची-कांग्रेसका भाषावार प्रान्तरचनाका प्रस्ताव सचमुच हितकर है या नहीं, यह सन्देह मेरे मनमें सन् १९३८ से ही होने लगा था, और मैंने अुस पर फिरसे सोचनेके लिअे अनुरोध भी किया था। मैं मानता हूं कि बहुभाषी प्रान्तके लोगोंको अुस प्रान्तकी अिकाअी तोड़े बिना ही अेकभाषी प्रान्तके सारे लाभ दिये जा सकते हैं। मैं तो यह भी मानता हूं कि जनताके हितकी दृष्टिसे अेकभाषी प्रान्तोंकी अपेक्षा बहुभाषी प्रान्त ज्यादा अुपयोगी हैं। हमारा राजतंत्र यों ही हदसे ज्यादा खर्चीला है; और प्रादेशिक राज्योंकी संख्या बढ़ाकर अुसे अधिक खर्चीला बनाना भारतकी ताकतके बाहर है। श्री मनु सूबेदारकी रायमें तो मौजूदा राज्योंको भी तोड़ देना चाहिये, और समूचे भारतका शासन प्रायः कमिश्नरोंके प्रान्तोंकी पद्धति पर होना चाहिये। अुनकी यह राय ध्यानपूर्वक विचार करने योग्य है। लेकिन अुसे छोड़ दें, तो भी बहुभाषी प्रान्तोंकी रचनासे प्रान्तीयता और भाषाओंके संकीर्ण विकासकी प्रवृत्तिके दोष दूर होंगे। और सरकार अैसे कर्मचारियोंकी नियुक्ति कर सकेगी, जो स्थानीय सम्बन्धों और प्रभावोंसे मुक्त हों। कभी-कभी यह बहुत जरूरी होता है।

अिससे अिनकार नहीं है कि अेक भाषावाले सब लोगोंका समावेश यथासंभव अेक ही राज्यके भीतर होना चाहिये। लेकिन अिसके लिअे "अेक भाषा—अेक राज्य" का सिद्धान्त मानना जरूरी नहीं है। हिन्दीको महत्त्वपूर्ण कामकाजके लिअे सबकी सामान्य भाषाकी तरह स्वीकार करके, अेक ही प्रान्तमें दो या तीन भाषाओं तकका मेल कर सकना बहुत मुश्किल काम नहीं है।

अगर यह मत स्वीकार कर लिया जाय, तो डांग प्रदेश सूरतके साथ जोड़ा जाय या नासिकके साथ, अिसके और अैसे दूसरे सवालोंके निर्णयके लिअे सिर्फ भाषा नहीं, बल्कि भौगोलिक तथा शासनकी सुविधाओंका भी आधार लेना चाहिये। राज्यके किसी क्षेत्रमें अुस क्षेत्र या राज्यकी मुख्य भाषासे भिन्न कोअी दूसरी भाषा बोलनेवाले अल्पसंख्यक लोगोंको अिसमें अैसा डर रखनेका कोअी कारण न होना चाहिये कि अुनके साथ जबरदस्ती की जाती है या की जायेगी। वैसे तो, दूरदर्शिता अिसीमें है कि छोटे-छोटे अल्पसंख्यक समुदाय अपने क्षेत्रके बहुसंख्यकोंकी भाषा अपना लें। अिस तरह, विचारमें तो पूनामें स्थायी तौर पर बस गये गुजरातियों, सिन्धियों, पंजाबियों, मद्रासियों तथा दूसरे सब लोगोंको पूरी तरह मराठी भाषा अपना लेनी चाहिये। अुसी तरह बड़ोदा आदिमें रहनेवाले महाराष्ट्री, सिन्धी आदिको पूरी तरह गुजराती बन जाना चाहिये। दरअसल कअी लोग अैसे हैं, जिन्होंने अैसा किया है। खानदेश, अहमदनगर, बालापुर (बरार) आदिमें बसे हुअे गुजराती लगभग मराठी और महाकोशल तथा अुत्तर प्रदेशमें बसे हुअे पूरे हिन्दी भाषा-भाषी हैं। अुनमें से कुछ आपसमें अपनी अलग बोलीका व्यवहार करते हैं, और अुसे गुजराती कहते हैं, लेकिन वह गुजरातकी गुजराती नहीं होती। अिसी तरह, कर्नाटकमें बसे हुअे राजपूत पूरे कर्नाटकी हैं। गुजरातके माहेश्वरी मारवाड़ीका अेक शब्द भी नहीं बोल पाते।

भाषावार प्रान्तरचनाके हिमायतियोंसे मेरा निवेदन है कि वे अपने मतका पुनः संशोधन करें, और हमारे देशकी समस्याओंका अैसा समाधान ढूंढें, जिससे अलगपन बढ़ानेकी प्रवृत्ति कम हो। जहां साधारण जनता अितनी निरक्षर और बेजबान है, तथा अितनी अबोध है कि अैसे सवालोंका आखिर हेतु क्या है, यह ठीक-ठीक समझ नहीं सकती, वहां राजनीतिज्ञ लोगों, व्यापारियों, और आवेशवर्धक भाषणकारोंके सहयोगसे, चोटीके कुछ शासनकर्ता प्रजाके समूहोंको मवेशी और भेड़-बकरीकी तरह कलम घिसकर अिस शासनसे अुस शासनमें बदल दें, यह अुनका गुनाह ही माना जाना चाहिये। सार्वजनिक मतगणना भी अैसे मामलोंमें कोअी सही तरीका नहीं है। अुसके बनिस्बत तो 'चित-पट' के तरीकेसे निर्णय करना कम दोषयुक्त है। क्योंकि कमसे कम वह भाषणकारोंकी जोशीली वाणी, पैसे, या शराबके प्रभावसे तो मुक्त है। किसी अैसी व्यवस्थाको, जो अेक अरसे तक चल चुकी हो और लोगोंकी

www.vinoba.in

जिसका अभ्यास हो गया हो, अेकाअेक बदलना तब तक ठीक नहीं है, जब तक कि ओमानदारीसे यह न कहा जा सके कि परिवर्तन जनताके लिअे लाभदायी होगा। मैं देखता हूं कि अैसे विवादोंमें पुराने राजनीतिक अितिहास, शासन करनेवालोंकी सुविधा, व्यापार, आवागमनके मार्ग, प्राकृतिक सामग्री आदि पर तो काफी जोर दिया जाता है, लेकिन जनताके हितका कोओी खयाल नहीं रखा जाता।

हमारे देशमें सूक्ष्म जीवाणुओंकी तरह कोशोंके विभाजन द्वारा राज्योंकी संख्यावृद्धिका व्यापार जिस गतिसे चल रहा है, अुसे देखकर डर लगता है। । समय आ गया है कि हम अिस गतिको अुलट कर जुटाओके द्वारा बलवान बननेकी बात सोचें। मैं जो जुटाओी कहता हूं, अुसमें और अेक हाथसे या अेक केन्द्रसे राज्य चलानेमें फर्क है, अितना ध्यानमें रखना चाहिये।

वर्धा, २२-६-'५१ **कि० घ० मशरूवाला**

(अंग्रेजीसे)

# विनोबाकी पैदल यात्रा

## १४

### अुनतीसवां मुकाम

[ ता० ४–४–'५१ : बोलारम : ९ मील ]

कल ही तो विनोबाने अपनी बीमारीका जिक्र करते हुअे कहा था कि भगवान कसौटी लेना चाहते थे। यहांके निसर्गोपचार आश्रमके निमित्त आज अुन्होंने कुदरती अिलाजके बारेमें विस्तारसे कहा। श्री पारसमल जैन यहां अपना अेक निसर्गोपचार आश्रम चलाते हैं। फुरसतका समय अिसी काममें देते हैं। सवेरे पांच बजेसे आठ बजे तक मरीज आते हैं। सलाह या अुपचार, या दोनों पाते हैं। मालिश, वाष्पस्नान, कटिस्नान, अेनिमा आदिका प्रबंध है। विशेषतः बहनें ही अधिक संख्यामें आती हैं और अैसे लोगोंको आराम हुआ है कि जो सब तरफसे निराश हो चुके थे।

अपने भाषणमें विनोबाने कहा :

हम लोग वर्धासे हैदराबाद पैदल यात्रामें जा रहे थे, और आपके गांवका मुकाम हमने नहीं सोचा था। लेकिन यहां पर अेक भाओी प्राकृतिक चिकित्साका काम कर रहे हैं। अुनका आग्रह था कि अुनके स्थानमें हम अेक दिन बितायें। अुनके कामका अभी आरंभ हुआ है, अैसा तो नहीं कह सकते। लेकिन जो थोड़ा समय बचता है, अुसमें प्राकृतिक चिकित्साका काम वे कर लेते हैं। मैंने अुनकी बात मान ली। क्योंकि सर्वोदयकी जो जीवन-योजना है, अुसमें कुदरती अिलाजके लिअे अेक विशेष स्थान है।

अिस मुसाफिरीमें भी हम लोगोंको अुसके अनुभव आये हैं। चार दिनोंसे मुझे बुखार आता था। और अकसर अैसे मामूली बुखारमें बिना दवाओके केवल आहारके फर्कसे जो हो सकता है, वह करनेका हमेशा मेरा प्रयत्न रहता है। और हमारे गुरुने हमें सिखाया है कि परमेश्वरका नाम लेना यही सबसे बड़ी दवा है, जिसको अनेक महापुरुषोंने आजमाया है। तो, हम भी अुस पर श्रद्धा रखते हैं। हमने मुसाफिरी जारी रखी। चलना जैसे रोज होता था वैसा होता रहा। कुछ आहारमें फर्क कर लिया। बाकी सारा कार्यक्रम जैसेका वैसा जारी रहा। चार दिन बुखार सतत आया। मैं तीन दिनकी कल्पना करता था, लेकिन अेक दिन वह और आगे बढ़ा। चार दिनके बाद वह गया। अिस तरह भगवान कसौटी करता है और अनुभव देता है कि साधारण बीमारीमें कोओी दवा वगैराकी जरूरत नहीं रहती। जीवनमें थोड़ा परिवर्तन कर लिया, आहारमें फर्क किया, कुछ विश्रान्ति पचनेंद्रिय आदिको दे दी कि काम चल जाता है।

मामूली बीमारियोंमें अिस तरह काम हो जाता है। और जो विशेष बीमारी होती है, अुस पर कोओी खास अिलाज अभी किसीको सूझा नहीं है। तो अुसके लिअे केवल परमेश्वरके नामका ही आधार रहता है। अिस तरहसे दवाअियोंके लिअे बहुत कम अवकाश है। लेकिन आजकल हम देखते हैं कि जिधर जाओ अुधर डॉक्टर भी बढ़े हैं और रोग भी बढ़े हैं। और दोनों अेक दूसरेके शत्रु नहीं दीखते, बल्कि मित्र दीखते हैं। क्योंकि दोनों बढ़ते चले जा रहे हैं। अेक बढ़ता और दूसरा घटता, तो हम कह सकते थे कि वे अेक-दूसरेके शत्रु हैं। लेकिन जहां डॉक्टर मजेमें बढ़ते जाते हैं और रोग भी मजेमें बढ़ते जाते हैं, वहां यही अनुमान होता है कि दोनों मित्र हैं। और दोनों हाथमें हाथ मिलाये चलते हैं। यह हिन्दुस्तानके लिअे बड़ा खतरा है कि हिन्दुस्तानकी जनताको परदेशी औषधियोंका आधार लेना पड़े। भगवानने अन्न हमारी भूमिमें पैदा किया, तो हमारे रोगोंका अिलाज भी यहींसे होना चाहिये। लेकिन हर शहरमें आप देखेंगे कि कोओी छोटासा भी रोग हुआ, तो फौरन दवाओी देते हैं और वह दवा परदेशी होती है। मानो यहां अैसी कोओी वनस्पति भगवानने नहीं रखी या यहांकी कुदरतमें अैसी कोओी शक्ति नहीं रखी कि अेक छोटासा रोग भी दूर हो सके। लेकिन अेक गुलामी जहां जाती है, वहां वह अपने साथ दूसरी कओी गुलामियोंको लाती है। तो जो राजकीय गुलामी, अंग्रेजोंकी सत्ता, हम लोगों पर चली वह तो गओी, लेकिन अपने साथ-साथ दूसरी कओी गुलामियां जो वह लाओी थी, वे अभी नहीं गओीं।

वास्तवमें हमारे देशमें वैद्यशास्त्रका काफी अच्छा विकास हुआ था। हमारे अेक मित्र हैं, जो हमेशा कहते हैं कि हिन्दुस्तानकी भूमिमें विद्याअें तो बहुत प्रगट हुओीं, लेकिन दो विद्याअें अद्वितीय हैं। अेक वेदान्त-विद्या और दूसरी वैद्य-विद्या। मैं अिस चीजको वैसा कबूल नहीं करता। यह मैं कबूल करता हूं कि यहां जो वेदान्त-विद्या प्रगट हुओी, अुसकी बराबरी करनेवाली विद्या दुनिया भरमें कहीं नहीं हुओी। लेकिन यहांकी वैद्य-विद्या अद्वितीय है, अैसा तो मैं नहीं कह सकता। दूसरे देशोंमें भी काफी अच्छी वैद्य-विद्या चली है। यूनानमें चली है, अरबस्तानमें चली है। आजकल पाश्चात्य देशोंने दवाअियोंमें और शरीरके संशोधनमें बहुत तरक्की की है, यह मानना पड़ेगा। तो हमारे देशमें जो वैद्यशास्त्र निकला, वह कोओी अद्वितीय था या परिपूर्ण था, अैसा तो मैं दावा नहीं कर सकता। लेकिन फिर भी हमारे देशके लिअे जो दवाअियां चाहियें, वे यहींकी वनस्पतियोंसे मिलनी चाहियें। और यहांका वैद्यशास्त्र यहींकी वनस्पतियोंके बारेमें सोचता है, अितनी विशेष बात हमारे लिअे है। अर्थात् वैद्यशास्त्रके लिअे यह कोओी आश्चर्यकारक बात तो थी नहीं। क्योंकि हमारा जो वैद्यशास्त्र यहां पैदा हुआ, वह यहांकी वनस्पतियोंके बारेमें न सोचे, तो और कौनसी वनस्पतियोंके बारेमें सोचेगा? अिसलिअे यहांकी वनस्पतियोंका संशोधन अुसने किया। और वही हमारे कामका है। लेकिन वह कच्चा है। पूरा नहीं है। हमारी बहुत सारी पुरानी वनस्पतियां अैसी हैं, जिनको हम पहचानते नहीं हैं, जिनका नाम भी हम नहीं जानते। तो यह सारा संशोधन हमें करना है।

अिस संशोधनमें हमें जितना समय लगेगा अुतना हम दें, लेकिन साथ-साथ हमें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि परमेश्वरकी लीला और अुसकी योजना अैसी है कि वह हर किसीको पूरी तरहसे स्वावलंबी बना देता है। ज्ञानके साधन हरअेकको दिये हैं, अन्न-पचनकी शक्ति हरअेकको दी है, परिपूर्ण शरीर हरअेकको दिया है, हवा-पानी हरअेकके लिअे मौजूद हैं। तो ज्वरका अिलाज किस तरह करें यह तरीका भी हरअेकको दिया हुआ ही होना चाहिये। और वनस्पतियोंका बहुत आधार भी लेनेकी आवश्यकता नहीं

www.vinoba.in

होनी चाहिये। मिट्टीका अुपचार हो सकता है, पानीका अुपचार हो सकता है, अुत्तम हवाका अुपचार हो सकता है, प्रकाशका अुपयोग हो सकता है। अिस तरह वेदोंमें सृष्टिदेवताकी अुपासना अनेक प्रकारसे बताअी है और कहा है कि रोगोंके अिलाजमें पानीका कितना अुपयोग है, सूर्यकिरणोंका कितना अुपयोग है। यह सब वेदोंमें भरा पड़ा है। हम अगर जरा भी सोचें, तो ध्यानमें आ जायगा कि हमारा सारा शरीर अिस ब्रह्मांडका बना है। शरीरमें जो भी चीज भरी है, वह सारी ब्रह्मांडमें मौजूद है। बाहर पानी है तो शरीरमें भी रक्त आदि भरा है; बाहर सूर्यनारायण है तो शरीरमें आंख है और प्रकाश है; बाहर वायु है तो शरीरमें सांस है। अिस तरह जो चीज बाहर है, वह शरीरमें भी मौजूद है। यहां तक कि बाहर जो सोनेकी और लोहेकी खानें हैं, वे भी हमारे शरीरमें मौजूद हैं। यानी हमारे रक्त आदिमें जो धातु पड़े हैं, अुनमें लोहा भी है, तांबा भी है और सुवर्ण भी है। ये सारी चीजें जो ब्रह्मांडमें हैं, वे पिंडमें भी पड़ी हैं। शरीर ही जब ब्रह्मांडका बना हुआ है, तो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश अिन चीजोंका खूबीके साथ निर्भयतापूर्वक प्रेमसे अगर हम अुपयोग करें, तो बहुत सारे रोगोंका अिलाज हो सकता है।

अिस तरहकी प्राकृतिक चिकित्साकी विद्या गांव-गांवमें पढ़ाअी जानी चाहिये। अगर गांवोंके बारेमें हम यह सोचें कि हर गांवमें दवाखाना बने, तो अेक तो बनाना अशक्य है; और दूसरे, अगर बना भी लिया और सारी बाहरकी वनस्पतियां वहां आने लगीं, तो गांवको लूटनेका अेक नया रास्ता खुल जायगा। दूसरे रास्ते पहले ही बहुत बन चुके हैं। अुनमें यह और अेक अिजाफा अगर हुआ, तो गांवके रोग कम नहीं होंगे बल्कि बढ़ेंगे। क्योंकि लोगोंका आहार ही क्षीण हो जायगा। तो यह गांवका अिलाज नहीं हो सकता कि बाहरकी वनस्पतियां यहां आयें और बाहरका डॉक्टर यहां काम करे। हो यही सकता है कि गांवमें जो वनस्पतियां पैदा होती हैं, अुनका अुपयोग सिखायें। और बिना वनस्पतिके भी कहीं अेकाध फाका कर लिया, कहीं कुछ पानीका अुपचार किया, कहीं अेनीमा ले लिया। अिस तरह अपना रोग कैसे दूर हो सकता है, यह तरीका लोगोंको सिखाया जाय। अगर यह सिखाया जायगा, तो आप देखेंगे कि कमसे कम खर्चमें लोगोंकी अच्छीसे अच्छी सेहत बन जायगी। क्योंकि कुदरतमें अैसी शक्ति है कि वह शरीरको सुधारनेके साथ-साथ कोअी दूसरा बिगाड़ अुसमें पैदा नहीं करती। औषधियोंसे यह होता है कि अेक रोग दूर हुआ, अैसा आभास जहां होता है, वहां फौरन दूसरा रोग हो जाता है। अिस तरह रोगोंका सिलसिला लगा रहता है। और जहां अेक दफा किसी घरमें बोतलका प्रवेश हुआ कि वह बोतल अुस घरसे निकलती ही नहीं। अुस मनुष्यको खतम करती है, लेकिन वह बाकी रहती है। यह हालत दवाअियोंके कारण होती है।

तो देहातोंके लिअे अिन दवाअियों पर आधार रखना खतरनाक है। और शहरोंके लिअे भी वही चीज है। आखिर शहरोंमें रोग क्यों बढ़े? अिसलिअे कि शहरके लोग ठीक व्यायाम नहीं करते। अपने घरोंमें बैठे रहते हैं। अिसलिअे अच्छी हवा अुनको नहीं मिलती। खूब कपड़े पहनते हैं, अिसलिअे सूर्यकिरणोंसे वंचित रहते हैं। अिस तरह परमेश्वरकी दी हुअी देनोंका लाभ अुठानेसे वंचित रह जाते हैं। घर भी अैसे होते हैं कि जिनमें कुदरतसे दूर रहना पड़ता है। काम भी अैसा कि कुदरतके साथ कोअी ताल्लुक नहीं। फिर रातको जागेंगे, सिनेमा देखेंगे, खराब किताबें पढ़ेंगे। अिस तरह अपने शरीरको और मनको बिगाड़ लेते हैं तो रोग बढ़ते हैं। और अुनके अुपचारके लिअे फिर दवाअियां लेते हैं। डॉक्टरके पास जाते हैं। ऑपरेशन करवाना पड़ता है। कअी तरहके अिंजेक्शन चाहियें। फिर मांसादि चाहिये, निषिद्ध वस्तुका सेवन चाहिये। जो चीजें साधारणतया कोअी खाता नहीं है वे खानी चाहियें, दूर-दूरसे महंगी चीजें खरीदनी चाहियें। यह सारा अुसके पीछे आता है। और वह शहरवाला सब तरफसे क्षीण हो जाता है। तो शहरोंके लिअे भी प्राकृतिक चिकित्सा ही अुत्तम आधार है।

अब प्राकृतिक चिकित्साके बारेमें यहां विचार करूं, तो अुसमें बहुत समय लगेगा। विचार बहुत है और अनुभव भी कुछ लिया है। अेक वस्तु सिर्फ कहना चाहूंगा। यहां जो भाअी काम कर रहे हैं, अुनको आप मौका दीजिये। वे अपना धंधा करते हैं और बचे हुअे समयमें यह काम करते हैं। लेकिन आप अगर अुनको पूरा काम देंगे, तो वे वह धंधा भी छोड़ देंगे, और अिसी काममें लग जायेंगे। अुनका अुपयोग कीजिये और अुस विद्याको खुद सीखिये, ताकि अुन पर भी आधार रखनेका मौका न आये। और आपमें से हरअेक मनुष्य कुदरती अुपचारमें प्रवीण बन जाय। अुसका ज्ञान हासिल करनेके लिअे बहुत ज्यादा समयकी जरूरत नहीं है। हम क्या खाते हैं, किस चीजसे क्या परिणाम होता है, अिस तरहका आत्मपरीक्षण करना अगर मनुष्य सीख जाय और थोड़ा संयम सीख ले, तो यह विद्या हासिल हो सकती है। तो आप अिन भाअीसे वह विद्या हासिल करें, यह आपको मैं सूचना करना चाहता हूं।

अब अेक बात और। जहां प्राकृतिक अुपचारका स्थान होता है वहां हॉट वाटर बेग रखते हैं, अेनीमा रखते हैं, और भी कअी तरहके अैसे औजार रखते हैं। ये छोटे-छोटे औजार बड़े कामके होते हैं और वे मनुष्यको मौके पर जो राहत देते हैं, वैसी राहत कभी-कभी वनस्पतियोंसे भी नहीं मिलती। जरा अेनीमा लिया तो जो पेट दुखता था, अुसमें बहुत फर्क पड़ा। दूसरे बहुतसे अुपचार किये गये, लेकिन पेट पर कोअी असर नहीं हुआ। यह घटना तो हमने कअी बार देखी है और अनुभव किया है। तो ये छोटे औजार कामके हैं। लेकिन मेरा मानना है कि अिनके साथ-साथ कुदरती अुपचारकी संस्थाके पास अेक खेत भी होना चाहिये। और मरीजोंको अुनकी सेहत देखकर खेतमें कुछ काम भी देना चाहिये।

कुदाली, फावड़ा, चरखा आदि औजार भी कुदरती अुपचारके औजार हैं, अैसा मेरा दावा है। कोअी कहेगा कि यह तो अेक पागल मनुष्य आया है। जहां भी कोअी बात निकलती है, तो कुदाली, फावड़ा, चरखा लाता है। अुसको पूछते हैं कि भाअी हिन्दुस्तानकी पैदावार कैसे बढ़ेगी, हिन्दुस्तान लक्ष्मीवान कैसे बनेगा, तो कहता है कि कुदाली लो, फावड़ा लो, चरखा लो। अुसको पूछते हैं कि तालीम किस तरह दी जाय, तो कहता है कि तालीमका जरिया कुदाली, फावड़ा और चरखा है। अब आज तो यह भी बोलने लगा कि कुदरती अुपचारके औजार कुदाली, फावड़ा और चरखा हैं। हर चीजके बारेमें अैसा ही कहता है। तो यह पागल है, अैसा लोग कह सकते हैं। लेकिन मैं लोगोंसे कहूंगा कि मेरा पागलपन अितनेमें खतम नहीं हुआ है। मैं और आगे बढ़ गया हूं। मैं यह भी कहता हूं, और कअी मर्तबा कह भी दिया है, कि हमको जो लड़ाअियां लड़नी हैं, अुनके औजार भी कुदाली, फावड़ा और चरखा हैं। सामाजिक क्रांति हमें करनी है। राजकीय क्रांति भी हमें करनी है। कोअी यह न समझे कि हिन्दुस्तानमें आज जो राज्य-तंत्र चल रहा है, वह आदर्श है। सर्वोदयकी पद्धतिमें जो राज्यतंत्र आयेगा, अुसमें और आजके तंत्रमें बहुत फर्क होगा। तो हमें राज्य-तंत्र भी बदलना है। अुसके लिअे जो लड़ाअियां लड़नी हैं, अुन लड़ाअियोंके औजार भी मेरे मनमें तो कुदाली, फावड़ा, चरखा और चक्की ही हैं। और मेरा अपना विश्वास हो गया है कि मनुष्य बीमार पड़े अैसी भगवानकी हरगिज अिच्छा नहीं हो सकती। अुसने मनुष्यको हर चीज दी है। साथ ही अुसे भूख भी दी है। तो अिसका

www.vinoba.in

अर्थ यह हुआ कि भूखके लिअे परिश्रम करना परमेश्वरकी आज्ञा है। लेकिन मनुष्य परिश्रम करना नहीं चाहता और खाना चाहता है। और जरूरतसे ज्यादा भी खाना चाहता है। अिधर परिश्रम न करे और अुधर जरूरतसे ज्यादा खाय। यह जब चलता है तो परमेश्वरको क्रोध आता है और अुसके क्रोधसे वह हमें बीमारियां देता है। अगर हम ठीक कुदरती तौर पर जीवन बितायें और शरीर-परिश्रमसे ही रोटी कमानेका निश्चय करें, तो आप देखेंगे कि बहुतसी बीमारियां खतम हो जायेंगी।

आप यह पूछ सकते हैं कि हमारे देशमें कअी लोग शरीर-परिश्रमसे ही अपना गुजारा करते हैं, फिर अुन्हें क्यों बीमारियां होती हैं? अुसका कारण यह है कि अुन पर परिश्रमका ज्यादा बोझ पड़ता है और अुतने प्रमाणमें अुनको खानेको नहीं मिलता। दूसरे, जो लोग परिश्रम नहीं करते, वे अुनके हिस्सेका खाना खा लेते हैं। अिस तरह वे लूटे जाते हैं। और अुनको बीमारियां होती हैं। ये काम नहीं करते अिसलिअे अिनको बीमारियां होती हैं, और अुनको खाना नहीं मिलता, अिसलिअे अुन्हें बीमारियां होती हैं। अिस तरह दोनों बीमार ही पड़ते हैं। लेकिन अगर दोनों शरीर-परिश्रममें लग जायं और अनुकूल श्रम करें, नियमिततासे जीवन बितायें, और आहारकी मात्रा देखकर अन्न सेवन करें, ज्यादा न करें, तो अिसमें जरा भी सन्देह नहीं कि अीश्वरी योजनामें मनुष्यको बीमार पड़नेका कोअी कारण नहीं है।

दोपहरको कार्यकर्ताओंकी सभा हुअी थी। अुसके पहले सामुदायिक कताअीका कार्यक्रम था। कताअीमें गांवकी करीब पचास बहनें अुपस्थित थीं। अेक-दो तो खादी पहनी थीं। बाकी सबके बदन पर ठेठ मदरासी ढंगका मिलका या रेशमी कपड़ेका पहनावा था। अकसर विनोबाजी हर कातनेवालेके पास जाकर देख आते हैं। जब आज मैंने चलनेके लिअे पूछा, तो कहने लगे: "क्या देखें? अेक भी बहनके बदन पर खादी नहीं है।" वे अेक तरहकी पीड़ाका अनुभव करते दिखाअी दे रहे थे। फिर, चरखे आवाज भी काफी कर रहे थे। सूत बहुत टूटता था। बोलारम कताअीका केन्द्र माना जाता है। फिर भी दुरुस्तीकी कितनी गुंजाअिश थी!

कार्यकर्ताओंने अनेक प्रश्न पूछे। वे ही प्रश्न! परंतु विनोबाके जवाब देनेके तरीकेमें हर वक्त नवीनता प्रतीत होती है। अेक भाअीने कंट्रोलके बारेमें पूछा: सरकार यह कंट्रोल क्यों नहीं हटाती? लेवीके मामलेमें आजकल लोग अधिकारियोंसे मिलकर लेवी कम देते हैं और कालाबाजारमें ज्यादा कीमत लेकर बेचते हैं। गरीबोंको अनाज नहीं मिलता!

विनोबाने कंट्रोलके बारेमें कहा कि जो आता है वह कहता है कि सरकार कंट्रोल क्यों नहीं हटाती। लाखों-करोड़ों जिस बातको समझते और कहते हैं, अुसे आपकी सरकार नहीं समझती अैसा आप मानते हैं क्या? यानी आपकी सरकार या तो बेवकूफ है या करोड़ोंकी दुश्मन है। मेरे मनमें भी यह सवाल अुठता है और मेरा खयाल है कि अगर वे लोग राक्षस होंगे, तो अब आअिन्दा आप लोग अुन्हें न चुनकर देवताओंको चुन लेंगे। आज हर कोअी कंट्रोलके खिलाफ बोल रहा है। व्यापारी भी, जिन्हें कंट्रोलके कारण कोअी खास कष्ट नहीं, बल्कि कुछ लाभ ही हो रहा है, अुसके खिलाफ बोलते रहते हैं। सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, कांग्रेसी, किसान, यहां तक कि कॉलेजका साधारण लड़का भी कंट्रोलको गलत बताता है। तो यह कोअी मजाकका विषय तो नहीं है। अुस विषयका अभ्यास करना चाहिये — बिना अभ्यास किये केवल दोष निकालनेकी वृत्ति आत्मघातकी वृत्ति है। दो बरस पहले मैंने कहा था कि सरकारने गांधीजीके कहनेसे कंट्रोल अुठा लिया था और जताया था कि सब लोग ओमानदारीसे व्यवहार करें। परन्तु व्यापारियोंने साथ नहीं दिया। वे अनाप-शनाप भाव बढ़ाते गये। तब व्यापारियोंकी सभामें अिन्दौरमें मुझे कहना पड़ा कि भाअियो, आपने आखिर गांधीजीको भी धोखा दिया। अब राष्ट्रीयकरणके सिवा चारा नहीं रहा। आप लोगोंने अपना हक खो दिया। मेरे वाक्योंको कुछ सोशलिस्ट मित्रोंने दोहराया भी था। आज भी मैं अपने अुन शब्दों पर कायम हूं। व्यापारी वादा करें तो आज भी अुनके वादे पर विचार किया जा सकता है। परंतु आज तो सरकार और व्यापारियोंके बीच अकलकी लड़ाअी चल रही है। दोनोंकी अकलका देशको लाभ मिलना चाहिये, परंतु दुर्भाग्यसे अैसा नहीं हो रहा है। कंट्रोल विरोधी विचारक अभी वर्धामें जमा हुअे थे, परन्तु वे भी यह तय नहीं कर सके कि कंट्रोल अेकदमसे अुठा ही लिया जाय।

मैंने अेक विचार अिस सम्बन्धमें देशके सामने रखा है कि सरकार आज जो लगान पैसेमें वसूल करती है, वह पैसेके बजाय अनाजमें वसूल करे। दस-बीस सालके लिअे अिसकी मिकदार तय कर ले। अिससे देशभरसे अच्छा अनाज सरकारको मिल सकेगा, खुला बाजार रहेगा और अनाजके कंट्रोलकी जरूरत नहीं रहेगी।

फिर सवाल रहता है कपड़ेके बारेमें। कपड़ेका जो सवाल है अुसका हल आजकी परिस्थितिमें सिवा खादीके और किसी तरह नहीं निकल सकता। सारी बुद्धि, शक्ति और संपत्ति लगाने पर भी ये मिलें, जो सत्रह गज कपड़ा देती थीं, बारह गज पर आ गअीं। अब शायद साढ़े ग्यारह पर आवें और अगले दस बरसोंमें क्या होगा, कोअी नहीं कह सकता। फिर मिलोंमें यहांकी रूअी नहीं चलती। अुनके लिअे विदेशसे रूअी मंगानी पड़ती है। अिसके लिअे यहांकी कपास बाहर भेजनी पड़ती है। अब सोचिये कि जो चीज सबको हर समय चाहिये, वह हम न बनायें, जो चीज पहले घर-घर, गांव-गांवमें बनती थी, वह छीन ली जाय और हम अैसी अहम चीजके बारेमें परावलम्बी बन जायं तो क्या होगा? मेरा कहना है कि जैसे जंगल 'रिजर्व' होते हैं, वैसे ही कुछ ग्रामोद्योग भी 'रिजर्व' होने चाहियें; और खादी अुन 'रिजर्व' किये जानेवाले धन्धोंमें मुख्य है। हां, अपने औजारोंमें हम सुधार करेंगे — करते भी रहे हैं। अिस तरह यह अनाज और कपड़ेका सवाल हम हल कर सकते हैं।

प्रश्न: आजकल कांग्रेसकी प्रतिष्ठा पहले जैसी नहीं रही। अिसके लिअे क्या किया जाय?

अुत्तर: कांग्रेसके नेताओंने चार आनेके बदले कांग्रेसकी सदस्यता-फी अेक रुपया कर दी है। अिसलिअे कांग्रेसकी ताकत चौगुनी बढ़ी, और प्रतिष्ठा भी चौगुनी हो गअी, अैसा वे लोग समझ सकते हैं। लेकिन बात अैसी नहीं है। अब कांग्रेसमें मार खानेकी बात तो रही नहीं। गांधीजीके जमानेमें मार खानेकी बात थी। आज तो लड्डू खानेकी बात है। अिसलिअे कोअी भी धनवान चाहे तो दस हजार रुपया खर्च करके कांग्रेसके दस हजार मेंबर अकेला बना सकता है। अब अिस तरह कांग्रेसकी प्रतिष्ठा कैसे बढ़ सकती है? बात असल यह है कि कांग्रेसको चाहिये था कि वह जनताको कोअी प्रोग्राम देती। पर वह काम तो अुसने संस्थाओंको सौंप रखा है। धनवान लोग जैसे पूजाके लिअे ब्राह्मण रखते हैं, वैसे ही कांग्रेसवालोंने रचनात्मक कार्यकर्ताओंको काम सौंप दिया है। अेक काम चरखा संघको सौंप दिया, दूसरा तालीमी संघको, तीसरा हरिजन सेवक संघको। अिस तरह ये सारे ब्राह्मण कांग्रेसको मिल गये। गांधीजीने कांग्रेसको लोकसेवक संघमें परिवर्तित कर देनेके बारेमें जो कहा था, वह तो नहीं हो सका। रचनात्मक काम करनेवाली संस्थाओंको कांग्रेसमें जोड़ लिया गया। फिर प्रमाणित खादीकी बात निकली, तो कांग्रेसने अुसकी जरूरत नहीं समझी। यानी अेक तरफ तो चरखा संघको पूजाका अधिकार दिया। फिर कहा — गणेश यह नहीं, कोअी भी चलेगा।

www.vinoba.in

जो मंत्रीगण हैं, अुनकी हालत यह है कि जब मिलते हैं तो सिरको हाथ लगाकर कहते हैं कि सोचनेके लिअे समय ही नहीं मिलता। खानेको समय नहीं मिलता कहते, तो भी मैं समझ सकता था। विना चिंतन किये, बिना विचार किये, बिना सोचे-समझे ये लोग काम कैसे कर सकते हैं, अिसका मुझे आश्चर्य होता है। लेकिन अुन लोगोंको आश्चर्य नहीं होता। बल्कि अुनका कहना है कि हमने तो सोचनेवाले भी रख दिये हैं। हमारे सेक्रेटरी लोग यह काम करते हैं। अैसी हालत अुन बेचारोंकी है।

अब जो कांग्रेसवाले सरकारमें नहीं हैं, वे आपसमें लड़ते हैं। क्योंकि सभी जेल गये हुअे होते हैं, सभी सत्ताके स्थानों पर अपना अधिकार जताते हैं। अैसी हालतमें कांग्रेसको कौन बचावेगा? हमारा खयाल है कांग्रेसवालोंको अूपरके सर्क्युलरोंकी राह देखे बिना सेवाके कामोंमें लग जाना चाहिये। क्या भोजनके लिअे हम सर्क्युलरकी राह देखते हैं?

दा० मूं०

## विनोबाका पुनरागमन

ठीक तीन महीनेके बाद विनोबाजी कल सुबह सेवाग्राम वापिस लौटे। सेवाग्राममें कल अुत्साहका वातावरण होना स्वाभाविक था। प्रवासके दरमियान चार दिनका जो बुखार आ गया था, अुसके बाद विनोबाजीका वजन अब तक भर नहीं पाया; और यहाँसे रवाना हुअे तब जो था अुससे करीब ८ पौंड कम हुआ है। फिर भी वे अुम्मीद रखते हैं कि आज पवनार पहुँचनेके बाद फौरन खेतीका परिश्रम करनेमें जुट जायेंगे।

विनोबाके साथी भी सब कम-ज्यादा दुबले ही हुअे हैं। जिस पशुको आखिर में मालिक मारना चाहता है, अुसे वह अच्छी तरह खिलापिला कर तगड़ा बनाता है, और वह भी अितना मस्त होता है कि चाहे जितनी बरबादी करता हुआ अपना पेट भरता जाता है। लश्करी सिपाहियोंकी बात भी अैसी ही होती है। अुन्हें खूब खिलाया-पिलाया जाता है; और कम पड़ा तो जनताके खेत और भंडार लूट कर भी वे खाते हैं और आगे बढ़ते चले जाते हैं। जो पशु कामके लिअे अुपयोगी और अुत्पादक होते हैं और जीवनभर निभानेके होते हैं, अुन्हें अुनकी ताकत टिक सके अितना ही खिलाया जाता है और तंगी हो तो अुसमें भी कोरकसर की जाती है। लेकिन जो खिलाया जाता है, वह प्रेमसे खिलाया जाता है। शान्ति और प्रेमके सिपाहियोंकी बात भी वैसी ही होती है। विनोबाजीकी टोली जहाँ-जहाँ गअी, वहाँ अुसे भोजन सादा मिला, लेकिन अितने प्रेमसे मिला कि स्वाभाविक ही वे कृतज्ञताके साथ अपने भिन्न-भिन्न यजमानोंकी प्रशंसा करते हैं।

वर्धा, २७-६-'५१ कि० ध० म०


## स्त्री-पुरुष-मर्यादा

लेखक: किशोरलाल मशरूवाला

अनुवादक: सोमेश्वर पुरोहित

आज स्त्री-पुरुष-मर्यादाके प्रश्नने विकट रूप धारण कर लिया है। अिस पुस्तकमें लेखकने स्त्री-पुरुष-सम्बन्धके सारे प्रश्नोंकी — जैसे नौजवान और शादी, ब्रह्मचर्यकी साधना, सहशिक्षा, स्पर्शकी मर्यादा, विवाहका प्रयोजन, सन्तति-नियमन, 'धर्मके भाअी-बहन' वगैरा — सर्वथा मौलिक और क्रान्तिकारी ढंगसे विस्तृत चर्चा की है। यह पुस्तक समाजके विचारशील लोगोंको अिस प्रश्न पर बिलकुल नअी दृष्टिसे सोचने और मनन करनेकी प्रेरणा देगी।

कीमत १-१२-० डाकखर्च ०-४-०

नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद-९


## सवाल-जवाब

### विवाह और विद्या

सवाल — कालेज वगैरामें पढ़नेवाले लड़के-लड़की मां-बापको मालूम हुअे बिना आपसमें प्रेम करने लग जाते हैं। अुनमें से कुछ अपनी अिच्छाके अनुसार विवाह करनेमें सफल होते हैं और कुछ असफल रहते हैं। मां-बापकी अिच्छाके खिलाफ जानेकी अुनमें हिम्मत नहीं होती, अतः वे चाहें अुससे विवाह करना पड़ता है। नतीजा यह है कि वे निराश हो जाते हैं और अुनकी पढ़ाअी भी बिगड़ती है। अिसका क्या अिलाज है?

जवाब — विद्यार्थी अवस्थामें ब्रह्मचर्य पर अिसीलिअे जोर दिया गया है। ब्रह्मचर्यका अर्थ यह है कि अुस अवस्थामें किसीके साथ प्रेम किया ही नहीं जा सकता। भले ही शरीरको शुद्ध रखा हो, मनसे भी विकारोंका चिन्तन न किया हो, लेकिन अगर सरस्वतीके बदले किसी स्त्री या पुरुषके पीछे ही मन भटकता फिरे, तो विद्याके प्रति वफादारी तो घटती ही है। और फिर जो मां-बापके आधीन हों, अुन्हें चाहे जिसके प्रेममें पड़कर शायद ही शान्ति मिल सकती है। लड़के-लड़कियोंमें १८-२० वर्षकी अुमरमें या अुससे भी कम अुमरमें गृहस्थाश्रममें या प्रेममें पड़ने वगैराकी वृत्ति अुत्पन्न होती है, यह हमारे देशका दुर्भाग्य है। स्वस्थ जीवनमें तो विद्यार्थी २५-३० वर्षकी अुमर तक अभ्यास और कुश्ती, क्रिकेट, फुटबाल वगैरा खेल-कूदका ही विचार करते हैं। अैसे संस्कारों और वातावरणका पोषण किया जाना चाहिये। आज हमारा देश बिलकुल मनसे भी दुर्बल हो गया है। अिसका कारण भोगवासनाका जल्दी पैदा होना है। 'शिक्षाकी बुनियाद' नामक (गुजराती) पुस्तकमें अेक लेखमें मैंने समझाया है कि जिन प्राणियोंकी पौगंडावस्था (बाल्यावस्था) और कुमारावस्था जल्दी पूरी होती है, वे छोटे शरीरवाले और कम जीनेवाले होते हैं। जिनकी ये अवस्थायें लम्बे समय तक टिकती हैं, वे बलवान और दीर्घजीवी होते हैं। बिल्ली और बाघ, कुत्ता और सिंह, बन्दर और मनुष्य वगैरा अेक ही वर्गके प्राणियोंकी जांचसे पता चलेगा कि अुनके बल, अुमर, तेज वगैराके भेदोंके कारणोंमें यही महत्त्वका भेद है। लगभग ३० वर्ष तक शुद्ध कुमारावस्था बितानेकी वृत्ति हमारे लड़के-लड़कियोंमें पैदा होनी चाहिये। अब-अब जो कुंकुम-पत्रिकायें आती हैं, अुनमें वर-वधूको आशीर्वाद भेजनेकी विनती की जाती है। मैं स्वाभाविक सद्भावसे आशीर्वाद तो जरूर भेजता हूं; लेकिन २०-२२ वर्षके या अुससे भी छोटे तरुण-तरुणियोंको विवाह करते देखता हूं, तो आशीर्वादके साथ जो प्रसन्नता होनी चाहिये, वह नहीं होती। मनमें यह नियम बना लेनेका भी विचार आता है कि २५ से अूपरका वर और २२ से अूपरकी कन्या हो, तो ही आशीर्वाद भेजे जायं।

वर्धा, १८-६-'५१ कि० ध० मशरूवाला

(गुजरातीसे)

विषय-सूची


| | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| शिवरामपल्लीमें विनोबा — ३ | | १६१ |
| हिन्दीकी परीक्षाअें | गिरिराजकिशोर | १६३ |
| भाषा और प्रान्त | कि० ध० मशरूवाला | १६४ |
| विनोबाकी पैदल यात्रा — १४ | दा० मूं० | १६५ |
| सवाल-जवाब | कि० ध० मशरूवाला | १६८ |
| टिप्पणी: | | |
| विनोबाका पुनरागमन | कि० ध० म० | १६८ |


www.vinoba.in